मजदूरों का अपना कोई देश नहीं होता। दुनियां के मजदूरो, एक हो!

फरीदाबाद मजदूर समाचार

मजदूरों की मुक्ति खुद मजदूरों का काम है। दुनियां को बदलने के लिए मजदूरों को खुद को बदलना होगा।

RN 42233 पोस्टल रजिस्ट्रेशन L/HR/FBD/73

नई सीरीज नम्बर 55 जनवरी 1993 1/-

दिसम्बर 1992 के घटनाक्रम को दिमाग में रखते हुये हम विश्लेषण, भविष्य-दृष्टि और मजदूर वर्ग के कार्य-भारों के सम्बन्ध में यहां एक प्रयास कर रहे हैं। परिस्थितियों की गम्भीरता के दृष्टिगत हम आशा करते हैं कि विषय–वस्तु पर पाठक विस्तृत टीका-टिप्पणी करेंगे। इन्हें प्रकाशित करने में हमें खुशी होगी। अगर फरीदाबाद मजदूर समाचार इस विषय पर बहस का मंच बन सका तो हम अपने प्रयास को फलदायी मानेंगे।

बड़े वाद-विवादों में अक्सर हमारा रोजमर्रा का जीवन शहीद होता है। और, रोजमर्रा के जीवन से ही उपजते हैं बड़े वाद-विवाद। यह उचित होगा कि पहले हम करोड़ों के यहां व दुनियां में अन्य स्थानों पर रोजमर्रा के जीवन का विस्तृत वर्णन करें।

शर्म आती है इसलिये मुंह-अन्धेरे जंगल-मैदान के लिये उठना। नलके पर लाइन लगाना। छह-साढ़े छह वाली शिफ्ट हो तो बिना चाय ही फैक्ट्री चल देना। दो-चार-छह किलोमीटर साइकिल दौड़ाना। आठ-साढ़े आठ की शिफ्ट हो तो बिना सब्जी जल्दी-जल्दी चार रोटी सेंकना। गांव से साइकिल दौड़ा कर शटल पकड़ने वालों के लिये तो साढ़े आठ की शिफ्ट भी छह बजे ही शुरू हो जाती है!

कहीं हैमरों का शोर तो कहीं गैसों की बदबू और सर्वत्र सुपरवाइजरों-फोरमैनों-मैनेजरों की तीखी निगाहें। शटल की धक्का-मुक्की और टाइम स्केल स्टडीज की भागमभाग में साइड में काम कर रहे वरकर से तू-तड़ाक मन व शरीर को और कड़वा कर देती है। बेहूदी मजाक ही राहत! पेट है इसलिये लन्च। समय मूल्यवान है—कैन्टीन में आधे घन्टे में भीड़ के बीच बिखरती दाल और कच्ची रोटियों पर झपट्टे। जब मैनेजमेंट को प्रोडक्शन की जरूरत नहीं तब बैठे मक्खियां मारना और चिन्ता करना।

सांस-की-पेट की बीमारी। ई एस आई में भीड़ और रिश्वत। महीने की सात और दस के पास ठेकों पर भी लाइन! बाकी दिन पान-बीड़ी महंगे—तम्बाकू की पुड़िया का सहारा।

आठ बाई आठ में पांच-छह की बसीयत। पड़ोसियों से सुबह-शाम अक्सर चिक-चिक। पालक या मूली पर दिमागी कसरत। गम्भीर हिसाब-किताब महालक्ष्मी और श्री गणेश में चौका या छक्का पर।

उन्नीस-बीस के फर्क के साथ फरीदाबाद हो चाहे बम्बई, लन्दन हो चाहे कराची, मजदूरों का रोजमर्रा का जीवन इन्हीं रंगों से रंगा है। पोलैंड की एक महिला मजदूर कहती है: "हम तीनों शिफ्टों में काम करती हैं। आठ घन्टे की नाइट शिफ्ट के बाद सुबह ११ बजे तक भोजन सामग्री के लिये लाइन में खड़ा होना, फिर खाना बनाना और दो घन्टे सोने के बाद वापस काम पर . . . टी वी पर शाम को भाव बढ़ाने की नित नई घोषणायें की जाती हैं। काम करते वक्त हम एक-दूसरे से भावों पर चर्चा करती हैं और गालियां देती हैं। हमें कहा जाता है कि हड़ताल की वजह से प्रोडक्शन गिरेगा और हमें व फैक्ट्री को नुकसान होगा। जलूसों से कोई खास फरक नहीं पड़ता पर जलूस सरकार को कम से कम इतना तो याद दिला ही देते हैं कि मजदूर वर्ग है।" टी वी की जगह रेडियो के अलावा आटोपिन झुग्गियों में रह रहे भलानी टूल्स के रमेश और पोलैन्ड की महिला मजदूर की जिन्दगी में कोई फर्क है क्या?

और देखिये इतिहास में शोहरत वाले शिकागो शहर की एक झलक आज—आठ घन्टे काम के लिये एक कामगार को इतना वेतन मिले कि एक परिवार का भरण-पोषण हो सके वाली डिमान्ड के लिये १८८६ में अमरीका के इस प्रमुख औद्योगिक शहर में मजदूरों ने जुझारू संघर्ष किये थे। इन सौ सालों के दौरान महिला मुक्ति आन्दोलन के संग-संग परिवार का खर्च चलाने के लिये स्त्री और पुरुष, दोनों द्वारा नौकरी करना अमरीका में आम बात हो गई है। फिर भी, १९९० में उसी शिकागो में मजदूरों ने १२-१३ घन्टे रोजाना की ड्यूटी से तंग आ कर इस मांग के लिये हड़तालें की हैं कि वरकरों की ड्यूटी १० घन्टे प्रतिदिन का कानून बनाया जाये।

शिकागो कोई अजूबा जगह नहीं है। दक्षिण कोरिया के सबसे बड़े औद्योगिक नगर उलसान की सबसे बड़ी कम्पनी हुयुन्दाई हैवी इन्डस्ट्रीज में बीस हजार मजदूरों की १०९ दिन से जारी हड़ताल को तोड़ने के लिये ३० मार्च ८९ को १४५०० हथियार-बन्द सिपाहियों ने हमला किया। ७०० मजदूर गिरफ्तार किये। नवम्बर १९८८ में वोल्टा रेजेंडा स्थित ब्राजिल के सबसे बड़े इस्पात कारखाने के बीस हजार मजदूरों ने हड़ताल की। स्टील प्लान्ट के गेटों पर फौज ने टैंक अड़ा दिये। हड़ताल तोड़ने के लिये कारखाने में घुस रहे सात सौ फौजियों और मजदूरों के बीच टकराव हुआ।

इंग्लैंड में ४० हजार कोयला खदान मजदूरों की छँटनी के लिये १९८४ में तीखे टकराव हुये थे। इस समय वहां पर ३० हजार और कोयला खदान मजदूरों की छँटनी पर विवाद छिड़ा हुआ है।

दुनियां के हर देश में आज छँटनी, तालाबन्दी, वेतन में कटौती, वर्क लोड में वृद्धि, सुविधाओं में कटौती, फैक्ट्रियों का बन्द होना - आधी कैपेसिटी काम करना, बेरोजगारों की बढ़ती संख्या, दंगे-फसादों में हजारों का मरना, पुलिस-फौज का सामाजिक जीवन में बढ़ता हस्तक्षेप आम घटनायें हो गई हैं। क्यों?

मजदूर लगा कर मण्डी में बिक्री के लिये प्रोडक्शन आज दुनियां में हर जगह हो रहा है। ट्रक-ट्रेन-जहाज-वायुयान-टेलीफोन का ताना-बाना दुनियां के प्रत्येक मजदूर, प्रत्येक प्रोडक्शन यूनिट, प्रत्येक मण्डी को एक-दूसरे से जोड़े हुये है। मैत्री, प्रेम, सद्भावना का इस जोड़ से कम ही रिश्ता है।

फैक्ट्री में ट्रकों की लोडिंग-अनलोडिंग, मजदूरों का काम पर लगना-छूटना विश्व मण्डी की जटिल बनावट के अंग हैं। यह बातें कुछ अटपटी लग सकती हैं। लेकिन आज अन्तरराष्ट्रीय तौर पर प्रतियोगी-कम्पीटीटिव बने रहना प्रत्येक प्रोडक्शन यूनिट और हर मजदूर के लिये एक निष्ठुर-निर्मम हकीकत है। दूसरों से सस्ता बनाने की अनिवार्य अन्धी दौड़ जारी है। और इसका अर्थ है कम से कम लागत पर अधिक से अधिक उत्पादन लेने की प्रत्येक मैनेजमेंट की आवश्यकता। इनसैन्टिव स्कीमें और सतत आटोमेशन किन्हीं खुराफाती दिमागों की उपजें नहीं हैं और न ही प्रोडक्शन कट करना। विश्व मन्डी के अन्धे उतार-चढ़ाव इन्हें निर्धारित करते हैं। अमरीका में जनरल मोटर कम्पनी द्वारा ७४ हजार मजदूरों की छँटनी प्रतियोगिता में बने रहने की अनिवार्य आवश्यकता है।

हर मजदूर के प्रत्यक्ष अनुभव को यह हकीकत निर्धारित करती है पर डायरेक्ट एक्सपीरियन्सों में समग्रता में यह कम ही नजर आती है। जब-तब का उत्साह व प्रसन्नता और आमतौर पर मनमुटाव, कुण्ठा, घुटन ही अक्सर प्रत्यक्ष अनुभव में नजर आते हैं। प्रत्यक्ष अनुभवों और उनके निष्कर्षों को एक फैक्ट्री से दूसरी फैक्ट्री में पहुँचाने, एक इलाके से अन्य इलाकों को भेजने और एक समय के पार—एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरण में भयंकर कमी आज मजदूरों को दैनिक, संकुचित व आंशिक प्रत्यक्ष अनुभवों के बाड़े में कैद किये है। इस स्थिति का दुखद पहलू यह है कि प्रत्यक्ष अनुभवों का सामंजस्य जोड़ने में योगदान देने की बजाय आज एक मजदूर व एक मजदूर समूह को अपने में सिकोड़ रहा है। १९८९ में कानपुर में दस कपड़ा मिलों के मजदूरों ने अपनी पहलकदमी से रेलवे लाइनें जाम करके अपनी एक डिमान्ड हासिल की—मजदूर आन्दोलन को एक नई दिशा देने की इसकी क्षमता का बहुत ही कम उपयोग हो पाया है। कहां दस कपड़ा मिलों के ३५ हजार मजदूरों, उनके परिवारजनों और सहयोगियों का रेल लाइनों पर वह जुनूनी संघर्ष और कहां आज कानपुर में धार्मिक दंगों में मजदूरों द्वारा एक-दूसरे का खून बहाना।

मजदूरों की पराजयों के सिलसिले की जड़ में प्रतियोगी बने रहने की प्रोडक्शन यूनिटों की अनिवार्य आवश्यकता भी है जो कि मैनेजमेंटों व सरकारों को हथियारबन्द दमन तक पर उतरने को मजबूर करती है। मजदूरों की बार-बार की असफलतायें दुनिया-भर में सतत हिंसा, बढ़ती हिंसा का एक प्रमुख स्रोत हैं। परिवारों में बढ़ती कलह, फैक्ट्री-बस्ती में मजदूरों के बीच बढ़ते टकराव, लोकल व बाहर के मजदूरों के बीच तनाव में वृद्धि, धार्मिक जुनून का फैलता असर, राष्ट्र-नस्ल-रंग के नाम पर अहंकार में वृद्धि और अलग चिन्हित समूहों के सफाये की घटनाओं का बढ़ना असहायता से उपजे आक्रोश और हिंसा के विभिन्न टारगेट हैं। बोस्निया-सर्बिया में नस्ल और धर्म के नाम पर जारी सफाये अभियानों में बहता खून हो चाहे श्रीलंका में राष्ट्रीयता-नस्ल-धर्म के नाम पर चल रहा खून-खराबा, इसके उदाहरण हैं।

शेष पेज 4 पर

मजदूरों के खत—मजदूर आन्दोलन के बारे में पत्र

अपनी जिन्दगी के किसी भी पहलू पर मजदूरों के खत आमन्त्रित हैं। पत्र-रूप में मजदूर आन्दोलन पर विचारों व अनुभवों का भी स्वागत है। हम दो पन्ने इनके लिए रखने की कोशिश करेंगे। अगर कोई अपना नाम - पता नहीं छपवाना चाहते तो हम उनके पत्र बिना नाम पते के छाप देंगे। वैसे, हम आम- तौर पर नाम - पतों के साथ खत छापेंगे।

इस सम्बन्ध में हमारे इन कुछ अनुरोधों को ध्यान में रखें। पत्र साफ-साफ लिखें ताकि प्रेस में सीधे- सीधे दिये जा सकें - इस प्रकार आप हमें पुनः लेखन से बचा कर हमारी, मदद करेंगे। आमतौर पर हम पत्रों को हूबहू छापेंगे। इसलिए अपनी बात को थोड़े में स्पष्ट करने की कोशिश करें। इस सम्बन्ध में अपने अनुभव का कुछ जिक्र कर दें। किसी फैक्ट्री की छोटी-सी सीधी - सरल रिपोर्ट के लिये भी रफ ड्राफ्ट बनाना और उसमें काट-छाट करने के बाद फेयर करना हमारे लिए उपयोगी रहा है। ज्यादा से ज्यादा खत लिखें। बेझिझक लिखें।

खेतड़ी, राजस्थान से

...महान लेखक प्रेमचन्द जी ने लिखा है, "मनुष्य बिगड़ता है यों तो परिस्थितियों से या पूर्व संस्कारों से। परिस्थिति से गिरने वाला मनुष्य उन परिस्थितियों का त्याग करने से ही बच सकता है।" आज के मजदूर आन्दोलन की गिरावट का मुख्य कारण भी वे शोषक-भ्रष्ट वर्ग द्वारा रची गई परिस्थितियां हैं जिनके चक्रव्यूह में मजदूर वर्ग फांसा जा चुका है। ऐसी ही एक घिनौनी चाल से हम तांबा खान खेतड़ी नगर में मुकाबला कर रहे हैं। ताम्बा खान के लिये खेतड़ी क्षेत्र के किसानों की जमीन ली गई इस वायदे के साथ कि प्रति परिवार एक नौकरी दी जाएगी। आज भी उनमें एक हजार ऐसे वे परिवार हैं जिन्हें नाम मात्र की रकम २०० रुपए दे कर उनकी कास्त की जमीन ले ली और नौकरी भी नहीं दी गई। अपने चहेतों या धन देने वालों की भर्ती सन् १९६१ से होती आ रही है लेकिन वंचित खातेदारों को आज तक नहीं लगाया गया है। इसके अलावा १००० कैजुअल श्रमिक हैं जिन्हें १९८० से लेकर १९९२ तक काम करने पर अभी भी पक्का नहीं लगाया गया है। दूसरी तरफ तरफ गत सालों रिटायर हुए करीब १००० वरकरों के स्थान रिक्त पड़े हैं। आवश्यक प्रतिदिन के काम के लिए भी ठेकेदारों के जरिये श्रमिक बुलाये जाते हैं - ठेकेदार ३५ रुपये प्रति मजदूर कम्पनी से लेते हैं और २१ रुपये श्रमिक को देते है। इसके अलावा स्थाई किस्म के काम भी ठेकेदारों से कराते हैं जिनके १३०० मजदूर लगे हैं......ठेका एक जागीरी लूट का रूप ले चुकी है। इस तरह के अनेक उदाहरण हैं श्रमिक को अपनी मजदूरी से वंचित करने तथा जन-धन को लूटने के। फिर भी सभी रजिस्टर्ड यूनियनें इस अन्याय के विरुद्ध न केवल चुप है बल्कि मैनेजमेंट का समर्थन कर रही हैं। इन हालतों को बनाने में ओवर टाइम के पैसों के रूप में अनुचित धन प्राप्ति ने मजदूर आन्दोलन को भ्रष्टाचार की गिरफ्त में ला कर पूंजीवादी बना दिया है। ताम्बा खान में इस समय कुल ७५०० मजदूर हैं प्रतिमाह कुल वेतन का १५ प्रतिशत, ३५ लाख रुपया ओवर टाइम पर दिया जा रहा है - यूनियन नेता अपने चहेतों को ऐसे स्थान की टोलियों में रखवाते रहते हैं जहां ओवर टाइम एक बाढ़ के रूप में मिले - ३६ घंटों का ओवरटाइम सामान्य, यहां तक कि एक को ५६ घण्टे का भी ओवर टाइम दिया गया। देखिये आप जबकि औद्योगिक कानून के अनुसार सामान्यतः दो पाली से ज्यादा एक श्रमिकों को कार्य के लिए नही रोकाजा सकता। क्योंकि श्रमिक मशीन नहीं एक मानव है, एक परिवार का मुखिया है उसकी सामाजिक एवं शारीरिक स्वस्थता समाज एवं देश के लिए जरूरी है। लेकिन एक तरफ एक मजदूर ३००० रुपए प्रतिमाह उठाता है, दूसरी तरफ इन गिरी परिस्थितियों के कारण दुष्टों से ताल मेल करने वाला १०,००० रुपए प्रतिमाह घर ले जाता है। फिर शराब के ठेके, भ्रष्ट लोग, सूद खोरी करने वाली जमात उस मजदूर के गुण गाती हैं। जब कि बच्चे उसकी शक्ल कई दिनों तक देख ही नहीं पाते - पारिवारिक एवं सामाजिक समस्याएँ ऐसा रूप ले रही हैं कि मजदूर आन्दोलन का चारित्रिक पतन हो रहा है। जब हमने कापर मैनेजमेंट से दिनांक ४-१२-९२ को वार्ता में कहा विश्व के किसी भी कारखाने में ज्यादा से ज्यादा ओवर टाइम ५ प्रतिशत से ज्यादा किसी भी हालत में न होता है, न होना चाहिए। यह विनाशकारी है। वे इसे मानने को तैयार नहीं। हमने कहा कि आप १००० स्थाई श्रमिकरखें, कम से कम ७ मजदूरों पर एक अतिरिक्त श्रमिक रखें। इससे एक तरफ एक हजार परिवार कमा खाएंगे, आपको भी बहुत बचत - कम से कम करोड़ों रुपयों की सालाना होगी। हमारे तथ्यपूर्ण आंकड़ों व वास्तविकता से जब उनका सामना हुआ तो चुप रह कर इस पर आगे चेयरमैन, कापर के साथ बात करने की बात कह कर हम से अपना बचाव किया। लेकिन कब तक ? हम इस अनुचित परिस्थिति को बदलना चाहते हैं। हम श्रमिक को स्वस्थ मानव रख कर ही उसे श्रमिक जगत की शक्ति व मजदूर वर्ग हितैषी रख सकते हैं। वरना मजदूरों के बीच पलता यह मुट्ठी - भर भ्रष्ट समूह हमारी कमर तोड़ता रहेगा।

कामरेड सुमेर सिंह (मजदूर किसान संगठन)
अभय कालोनी, राहुल मार्ग, छावनी नीम का थाना,
जिला सीकर, पिन-332713

15-12-92

मन्दिर-मस्जिद और मजदूर

नफरत और अज्ञान हर धर्म की नींव के महत्वपूर्ण अंग हैं। खून - खराबे में अगुआ रहे लोग हर धर्म के मजबूत स्तम्भों में हैं। हर धर्म ने, जहां उसका बस चला है, अन्य धर्मों पर अत्याचार किए हैं। सच्चे धर्म के किस्से भाषणबाजों और नाक से आगे नहीं देख रहे लोगों के अखाड़े हैं। परस्पर प्रेम और धर्म के बीच वैसा ही उल्टा रिश्ता है जैसा सत्यमेव जयते और भारत सरकार के बीच है।

बिक्री के लिए उत्पादन वाली समाज रचना कुछ समय से अन्धी गली में फंसी है। दुनियां में छाई इस व्यवस्था को आज चौतरफा संकट एक बार फिर झकझोर रहे हैं। छंटनी-वर्क लोड में वृद्धि-वेतन व सुविधाओं में कटौती - बढ़ती बेरोजगारी हर देश के मजदूरों को घेरे हैं। दस्तकारों - किसानों की पीड़ा असह्य हो गई है और टट्पुंजिये उनसे खास बेहतर स्थिति में नहीं हैं। बढ़ते कर्ज और दिवालियेपन के खतरों से मैनेजमेंटें बेचैन हैं। दुनियां में आज शायद ही कोई देश हो जहाँ सरकार डगमग नहीं है।

प्रत्येक व्यक्ति में बढ़ रही घुटन-कुण्ठा-असन्तोष समूहों के रूप में भी फूटती हैं। मजदूरों के संघर्ष जहां इनका एक रूप हैं वहीं रंग - नस्ल - क्षेत्र - भाषा - जाति - धर्म - लिंग - देश आदि के रूपों में बढ़ते टकराव इनके दूसरे रूप हैं। बेरोजगार नौजवान, छंटनी से त्रस्त मजदूर और नारकीय जीवन जी रहे अन्य लोगों में हिन्दू-मुसलमान के नाम पर धार्मिक जुनून का उभरना व उसे उभारना आसान होता है। अयोध्या से जुड़ी घटनाओं को कुछ इसी तरह समझने की जरूरत है।

धार्मिक चोला धारण किये घुटन-कुण्ठा-असन्तोष के प्रति मजदूरों का रुख क्या हो ? क्या अपने हित में संघर्ष करने के लिए धर्म मजदूरों के काम आ सकते हैं ?

दासों और दस्तकारों - किसानों के धर्म थोड़ा ही काम आए हैं। आमतौर पर स्वामियों और सामन्तों के लिए ही धर्म उपयोगी रहे हैं। दुनियां की हाल की घटनाओं पर एक नजर भी यह साफ - साफ दिखाती है कि अपने हित में संगठित होने और संघर्ष करने के वास्ते मजदूरों के लिए धर्म एक नाकारा औजार तो है ही, यह नुकसानदायक भी है। आज धार्मिक चोले भीड़ के बदहवास गुस्से को निशाने देते हैं और इस आदमखोर सिस्टम, इस मानवभक्षी व्यवस्था को जीवन-दान देते हैं। साथ ही साथ, यह इस व्यवस्था के कर्ता-धर्ताओं के बीच कुर्सियों के लिए शतरंजी शह-मात की चालें भी लिए हैं।

आज भारत में धर्मों की रक्षा के लिए कांग्रेस-सीपीएम-सीपीआई-जनता दल आदि और भारतीय जनता पार्टी-शिवसेना आदि के इर्द-गिर्द दो गिरोहबन्दियां हो रही हैं। धर्मों के बीच मौजूदा सन्तुलन को बनाए रखना-धर्मों के बीच नया संतुलन स्थापित करना इन गिरोहबन्दियों की धुरी हैं। दोनों गिरोहबन्दियों का शह-मात का खेल बढ़ती घुटन-कुण्ठा-असन्तोष को बढ़ते खून-खराबे की राह धार्मिक जुनून की तरफ धकेल रहा है। इन्सानों के लिए, मजदूरों के लिए यह खूनी दलदल में धंसते जाने की राह है।

दमन-शोषण-घुटन-कुण्ठा से छुटकारा कैसे पायें ?

इसके लिए एक नई समाज रचना जरूरी है। बिक्री के लिए उत्पादन के स्थान पर मनुष्यों के उपयोग के लिए प्रोडक्शन वाले नए सिस्टम को स्थापित करना जरूरी है। इसके लिए हमें कैजुअल वरकर - ठेकेदारों के मजदूर-परमानेंट वरकर वाले रोड़ों, डिपार्टमेंट-शिफ्ट वाले भेदों, इस फैक्ट्री-उस फैक्ट्री वाली दीवारों को गिराने के लिए कदम उठाने जरूरी हैं। शहर में और देहात में काम कर रहे मजदूरों के बीच की खाई पाटने के लिए काम करना जरूरी है। क्षेत्र-भाषा-जाति-धर्म-लिंग-नस्ल-देश की बेड़ियों को तोड़ने के लिए प्रयासरत आन्दोलनों से तालमेल जरूरी है। जीवनयापन की वस्तुओं की बहुतायत की सम्भावना की समझ विकसित करने के साथ बढ़ते पैमाने पर मजदूरों की एकता और एकजुट संघर्ष की राह, वह राह है जो व्यक्ति और समाज के चौतरफा विकास वाले इन्सानी समाज को स्थापित कर सकती है।

स्वामी राम और सामन्त बाबर के वारिसों के फेर में पड़ना मजदूरों के लिए बरबादी की राह है !
आओ, मजदूर पक्ष के निर्माण की राह पर बढ़ें !

मजदूर मंच

मजदूर लाइब्रेरी, आटोपिन झुग्गी, फरीदाबाद-121001
(यह जगह बाटा चौक के पास है)

19-12-1992

— कानपुर से —

आपके समाचार पत्र नम्बर १९९२ के अंक में आपने नई राह करके एक लेख प्रकाशित किया है जिसे केन्द्र में रख कर आप एक सार्थक बहस शुरू करना चाहते हैं ताकि आगे आने वाले समय में मजदूर आन्दोलन को नई दिशा मिल सके।

आपने अपने लेख में कुछ मजदूर आन्दोलन के अनुभवों को व्यक्त किया है, और जिसमें आपने यह बताया है कि मजदूर में दो सोचें विद्यमान हैं - १. अगर सभी मजदूर एकजुट हो जायें तो उनकी समस्याओं का समाधान हो जाए। २. जब मजदूर बिखरता है तो वह बिचोलियों के पास जाता है।

आज समस्त मजदूरों के सामने यह प्रश्न है कि ऐसा कौन सा रास्ता हो कि मजदूरों की समस्याओं का हल निकल सके।

साथी, हम यह कहना चाहते हैं कि अगर हम दुनियां के मजदूर आन्दोलनों पर नजर डालें तो हम पाते हैं कि जहां-जहां भी व्यवस्था परिवर्तन की लड़ाइयां लड़ी गई हैं

बाकी पेज ३ में

—कानपुर से—

(पृष्ठ २ का शेष)

वहां भी यह विचार मौजूद रहे हैं। लेकिन हमारे उन मजदूरों ने उन लड़ाइयों में नेतृत्वकारी भूमिका निभाई है।

हमारे देश के मजदूरों का भी एक गौरवमय इतिहास रहा है। राष्ट्रीय आन्दोलन में हमारे मजदूरों ने बम्बई की सड़कों पर मार्च पास्ट करके ब्रिटिश हुकूमत को यह बता दिया था कि अगर हमने करवट बदली तो तुम्हारा नाम इस धरती (भारत) से मिट जायेगा। लेकिन हमारे उस बढ़े हुये कदम को भी व्यवस्था के पोषकों ने व्यवस्था के ही हितों में इस्तेमाल कर लिया। सवाल है कि ऐसा क्यों हुआ ? कौन है इसका जिम्मेदार ? या, क्या मजदूरों की यही नियति है ? आदि-आदि ....

अब हम आपको अपने महानगर की कुछ घटनाओं को दिखाकर इस सवाल पर चर्चा करेंगे।

सन् १९७७ में कानपुर के अन्दर स्वदेशी काटन मिल के मजदूरों ने इस मांग को लेकर प्रदर्शन किया कि तीन पन्द्रहिया का बकाया वेतन भुगतान किया जाये। याद रहे इस सवाल को ले कर बिचौलियों के द्वारा मिल मालिकों और मजदूरों के बीच लगातार एक भ्रमात्मक स्थिति पैदा की जाती रही। लेकिन जब मजदूरों ने अपने अनुभव से देखा कि उनकी समस्या अधर में लटकाई जा रही है तो उन्होंने बागडोर अपने हाथ में ले कर संघर्ष किया। ११ साथियों के शहादत के बाद माँगे पूरी हुई। मिल का राष्ट्रीयकरण हुआ।

तो दूसरी तरफ कानपुर के सूती मिलों में के के पाण्डे एवार्ड जो कि मिलमालिकों एवं नौकरशाही के दबाव में बनाया गया था। उसे लागू न किया जाये इस सवाल को लेकर हमारे महानगर के मजदूरों ने समस्त मिलों के मजदूरों को एकत्र करके ऐतिहासिक रेल जाम किया। और विजय प्राप्त की।

आइये अब हम देखें कि क्या इतने बड़े-बड़े आन्दलनों को करने के बाद भी मजदूरों के जीवन में कोई गुणात्मक परिवर्तन आया, या फिर मजदूर फिर उन्हीं बिचौलियों, रंग-बिरंगे झण्डों के दलदल में फँस गया।

मेरा कहना है कि हां, आज भी मजदूर उन्हीं को चुंगल में फंस गया है। आखिर कारण क्या है ? कौन है हमारी इस स्थिति के लिए जिम्मेदार ? शायद एक उदाहरण इसे समझने में मददगार हो सके।

आज देश में जो नई आर्थिक और औद्योगिक नीतियां आई हैं उनका बीजारोपण सन् १९७४ से ही हो गया था। परन्तु क्या हुआ हमारे तथाकथित नेताओं और बुद्धिजीवियों ने इस दिशा में अपनी पहल और जिम्मेदारी निभाई ?

मैं कहना चाहता हूँ कि ऐसे सवाल हमारे जीवन बार-बार आते रहेंगे। और हमें ऐसे सवालों से लड़ते हुए एकनई राह खोजनी है तो हमें आर्थिक सवालों के साथ-साथ राजनैतिक और सामाजिक परिवर्तन की लड़ाई के लिए भी तैयार होना होगा जिसके लिए निम्न कार्यों पर भी ध्यान केन्द्रित करना होगा:-

हम जहां जहां भी काम कर रहे हैं वहां के मजदूर साथियों से इस बात पर बहस करानी होगी कि इस व्यवस्था का चरित्र क्या है और उसमें हमारी क्या जिम्मेदारियाँ हैं। तो हम पाते हैं कि मजदूर वर्ग को ही भूमिका निभानी होगी कि वह किसानों, बेरोगारों, नौजवानों, शिक्षकों, विद्यार्थियों एवं समस्त शोषित जनता की लड़ाइयों में नेतृत्वकारी भूमिका अदा करे। इसके लिए अपने बीच अध्ययन ग्रुपों का निर्माण करना होगा। मजदूरों के लिए पुस्तकालयों, समाचारपत्रों का निर्माण करना होगा। अपनी संस्कृति का निर्माण एवं प्रचार-प्रसार करना होगा। सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक परिस्थितियों का सटीक विश्लेषण शोषित जनता के हितों के अनुसार करना होगा।

और यहीं से नई राह का विकास होगा।

सन्त लाल प्रजापति
(सदस्य केन्द्रीय समिति)
ब्रह्मावर्त मेहनतकश एकता केन्द्र,
517 आई. आई. टी. गेट,
कल्याणपुर
कानपुर-2080 6

1-12 92

—धनबाद से—

.......मजदूर हलचल के बारे में कुछ रिपोर्ट :-

१. एरिया VI के ओपन कास्ट प्रोजेक्ट के ओ सी पी में मैनेजमेंट द्वारा ३० दिन काम २६ का पैसा चालू करने की कोशिश के खिलाफ मजदूरों की व्यापक प्रतिक्रिया हुई। मजदूर हड़ताल नहीं किया, काम पर जाना और हाजिरी बनाकर बैठ रहना, यही चलता रहा। मजदूरों को डराने के लिए धारा २८ के तहत दो मजदूरों डिसमिस कर दिया लेकिन मजदूर टस से मस नहीं हुआ। यूनियन के सभी नेता एक पंच पर आने को मजबूर हुआ। मजदूर किसी के बहकावे में नहीं आये। मैनेजमेन्ट ने मजबूर होकर अपने आदेश को वापस लिया। अभी हाल यह है कि कोई भी मजदूर अगर गलती से भी किसी साहब को सलाम किया तो उस दण्ड स्वरूप २० रुपया देना पड़ता है। इस तरह के ओ सी पी का मजदूर अपने बल जीत हासिल किया। मैनेजमेंट का बोझ बढ़ाने की कोशिश की, मजदूरों के सामुहिक प्रयास ने उसे विफल कर दिया। के सी ओ पी में ३००० मजदूर हैं।

२. एरिया IX बी सी सी एल की जी ओ सी पी में इन्सेन्टीव पेमेन्ट की मांग करने पर चार मजदूर को ट्रान्सफर कर दिया। मजदूरों ने हड़ताल कर दिया। २ हजार मजदूर किसी यूनियन की मदद के बिना संघर्ष पर उतर पड़े। यहाँ भी यूनियन वाले, इन्टक को छोड़ कर, मजदूरों के पीछे हो लिए। वही पुराना ड्रामा - गरमागरम भाषण फुसलाना जारी रहा। इस बीच ६५ मजदूरों को डिसमिस कर दिया गया - धारा २८ के तहत। लेकिन मजदूर डटा रहा। ८ दिन हड़ताल के बाद मजदूरों का मांग मान लिया गया, डिसमिस उठा लिया।

यहां एक चीज देखा जा रहा है कि मजदूर यूनियन को बाइपास करके अपना संघर्ष खुद लड़ रहा है। यहाँ एक चीज और देखा जा रहा है कि एक जगह की लड़ाई दूसरे प्रोजेक्ट में फैलने की तरफ जाने के पहले मैनेजमेंट अपना आदेश वापस ले रही है। यूनियन वाले या मैनेजमेन्ट संघर्ष को फैलने से रोक नहीं पा रहे हैं। कोई भी यूनियन धारा २८ के खिलाफ नहीं जा पा रही कारण कि सभी यूनियन इस धारा में साइन किया है। लेकिन मजदूर जितना डर रहा है उतना ही संघर्ष छिड़ने के हालत में नेताओं को छोड़कर कदम उठा रहा है।

6-12-92

सुखदेव सोनार
धनबाद।

जगह की कमी के कारण फरीदाबाद के पत्र इस अंक में प्रकाशित नहीं हो पाए हैं।

—सम्पादक

खतों पर कुछ टीका-टिप्पणी

*मजदूर जिन्हें जीत मानते हैं कहीं वे झटके-धक्के झेल लेना मात्र तो नहीं है ? आमतौर पर देखा जा रहा है कि इस प्रकार की जीत की स्थिति में बड़े झटकों-धक्कों का आधार निर्मित होता हैं। फैक्ट्री-उत्पादन शाखा-क्षेत्र-देश के पैमाने पर अपने ऊपर हो रहे हमलों को विफल करने में मजदूरों को जब-तब मिल रही सफलतायें दरअसल साँस लेने-तैयारी करने की फुरसत होती हैं। शक्ति संचय करने के ऐसे अवसरों को "जीत" के खुमार में हम कहीं गँवा तो नहीं रहे हैं ?

*बिचौलिये नफरत योग्य हैं। मैनेजमेंटों को बिचौलियों की जरूरत होती है और वे इन्हें पालती हैं ! यह सब ठीक है। लेकिन मजदूर भी तो "बुरों" की जगह "अच्छे" बिचौलियों की दीर्घकाल से तलाश कर रहे हैं। कहीं ऐसा तो नहीं है कि बिचौलियों की जरूरत मजदूरों को भी हैं ? क्या ऐसा तो नहीं हैं कि इस सम्बन्ध में मजदूरों की शिकायत मात्र यह है कि बिचौलिये "अच्छे" नहीं हैं ? मजदूरों में वह क्या है जो उन्हें बिचौलियों पर आश्रित करता हैं ? इस पर विचार करने की जरूरत है। अन्यथा, कोसते जाने के संग-संग बिचौलियों का फलना-फूलना जारी रहेगा।

*क्या मैनेजमेंटें वास्तव में संकट में फँसी हैं या वे संकट में होने के ढोंग मात्र करती हैं ? यह सही है कि वेद-शास्त्रों के समय से साजिशें करना लूटेरों के लिये आम बात रही हैं। यह भी सही है कि साजिशें और उनके भण्डाफोड़ की कोशिशें महत्वपूर्ण हैं। लेकिन क्या भगवानों-महर्षियों की साजिशें स्वामी समाज व्यवस्था को बचा पाईं ? क्या चाणक्य-मैकियावेली के साम-दाम-दण्ड भेद सामन्तवाद को बचा सके ? तो क्या उन हालात को-उन शक्तियों को, जिन पर किसी मैनेजमेंट का किसी सरकार का बस नहीं चलता, उन्हें समझने और तदनुरूप अपने हित में कदम उठाना मजदूरों के लिये काफी उपयोगी नहीं होगा ?

*कम से कम लागत पर अधिक से अधिक उत्पादन करवाना क्या प्रत्येक मैनेजमेंट के प्रमुख कार्यों में नहीं हैं ? क्या मैनेजमेंटें इसके लिये विभिन्न तरीके नहीं अपनाती ? क्या यह मजदूरों और मैनेजमेंटों के बीच टकरावों के बुनियादी कारणों में नहीं है ? इन प्रश्नों पर शायद अधिक विवाद नहीं होगा। लेकिन प्रत्येक उत्पादन इकाई सामाजिक ताने-बाने का अंग भी होता है और यह मसलों को जटिल व सरल, दोनों बनाता हैं। विभिन्न दबावों-टकराओं के मध्य प्रत्येक मैनेजमेंट के कदम तय होते हैं। मजदूरों द्वारा अपने हितों के अनुरूप कदमों के लिये दबाव बनाना आवश्यक है। लेकिन किसी मैनेजमेंट से अपील-अपेक्षा का मजदूर आन्दोलन से क्या सम्बन्ध है ? और, किसी मैनेजमेंट को बेहतर ढँग से काम करने की सलाह-सुझाव देने का मजदूर आन्दोलन के लिये कोई अर्थ है क्या ?

*"समझ" होने अथवा नहीं होने की बात मजदूर अक्सर करते। समझ का मतलब क्या है ? अपने अनुभवों के आधार पर मजदूरों की पहलकदमी इस शब्द का निचोड़ है क्या ? लेकिन, प्रत्येक मजदूर व प्रत्येक मजदूर समूह के प्रत्यक्ष अनुभव कार्यक्षेत्र तथा समयविशेष की सीमाओं में बन्धे हैं। सामाजिक जीवन की आंशिक और वह भी अक्सर फोटोनुमा समझ ही प्रत्यक्ष अनुभव से इस प्रकार प्राप्त होती है। ऐसी समझ के आधार पर ही मजदूर आमतौर पर अमल कर रहे हैं और नतीजे बार-बार पिटने में निकल रहे हैं। इस सबको बदलने के लिये विभिन्न क्षेत्रों व भिन्न-भिन्न समय के मजदूर अनुभवों, मानव अनुभवों से प्राप्त समझ मदद करेगी क्या ? थियरी सिद्धान्त जैसे शब्द बेशक ऐसी समझ के लिये इस्तेमाल होते हैं। लेकिन मजदूर आन्दोलन के विकास के लिये सामाजिक प्रक्रिया को समझने के वास्ते ऐसी समझ की जरूरत है कि नहीं ?

पाँच-छह हजार साल से मानव समाज बंटा हुआ है। क्या स्वामी और दास के बुनियादी हित साँझे हो सकते हैं ? क्या नस्ल या धर्म के आधार पर पहचान की तरह ही देश के आधार पर पहचान मेहनतकशों को दिशाहीन नहीं करती ? देश-हित, देशभक्ति, राष्ट्रीय आन्दोलन, देश की मजबूती, देश का विकास जैसी शब्दावली, यह भाषा मजदूरों के हितों के अनुरूप कैसे है ?

*दूसरों की बातों का अर्थ समझना काफी आत्म-अनुशासन की मांग भी करना है। जब धरातल भिन्न हों तब तो यह और भी कठिन होता है। किसी की पूरी बात सुनना ही भारी पड़ता है, समझने के लिये दुबारा सुनना अथवा पढ़ना तो अत्यन्त कठिन कार्य है। निजी कमजोरी-निजी अनुभव इस सम्बन्ध में हमारे काफी है। अतः अनुरोध है कि किसी लेख से कोई अर्थ निकाल कर हमारे सिर पर धरने से पहले कृपया लेख को दो बार पढ़ने की कोशिश करें।

—सम्पादक

भारतीय उपमहाद्वीप में हाल का ताँडव इसी सिलसिले की कड़ी है।

एक से दस बीघा जोतते दसियों करोड़ काश्तकार, सदियों पुराने औजारों को इस्तेमाल कर रहे करोड़ों दस्तकार, नई-पुरानी किस्म की मशीनों वाली फैक्ट्रियों में काम कर रहे करोड़ों मजदूर यहां मन्डी में बिक्री के लिये उत्पादन करते हैं। और मंडी की आवश्यकता, अन्तरराष्ट्रीय तौर पर प्रतियोगी बने रहने की अनिवार्य आवश्यकता द्वारा जरूरी बनाये कदम इस विशाल आबादी की जीवन-क्रिया को झकझोर रहे हैं। सब्सीडियों में कटौती यहां लाखों नहीं बल्कि करोड़ों के जीवन पर प्रश्न-चिन्ह लगा रही है। आधुनिकीकरण दसियों लाख मजदूरों की बलि मांग रहा है। इस क्षेत्र में सामाजिक असन्तोष व उथल-पुथल का यह सामाजिक-आर्थिक आधार है। कराची में मुहाजिर-सिन्धी के नाम पर दंगे, बम्बई में मराठी-मद्रासी के नाम पर टकराव और हाल ही में कराची-बम्बई-अहमदाबाद-कानपुर-कलकत्ता-ढाका आदि के जुनूनी विस्फोट इसकी एक अभिव्यक्ति है जो भविष्य के प्रति और भी आशंकित करती है।

हर देश में कर्ज के बढते पहाड़ से दबी जा रही सरकारों के लिये अपने को चुस्त-दुरुस्त करने के लिये क्या-क्या आवश्यक है? एक शब्द में कहें तो सन्तुष्ट आबादी—सरकार और सरकारी नीतियों व कार्यों में लोगों की आस्था वाली अनुशासित वर्क फोर्स। लेकिन प्रतियोगी बने रहने के लिये झूठ-फरेब व दमन-शोषण हर सरकार की नींव के बुनियादी पत्थर होते हैं। यह सरकार में आस्था को डगमग करते रहते हैं। सरकार को बनाये रखने, सरकार पर नियन्त्रण स्थापित करने के लिये प्रयासरत समस्त राजनीतिक धारायें डगमग आस्थाओं को स्थिरता देने का प्रयास करती हैं। दुनिया-भर में उभर रही पुरातनपन्थी कट्टरवादी सामाजिक-राजनीतिक धारायें बढते सामाजिक असन्तोष द्वारा राष्ट्र-सरकार में जन्म ले रही अनास्था को नई परिभाषा व रूप के जरिये आस्था में बदलने की कोशिशें हैं।

भारत में हिन्दू राष्ट्रवाद नये संस्कार-नई पहचान-नये संविधान की लहर उभार कर बढते सामाजिक असन्तोष को संगठित करने व दिशा देने का प्रयास कर रहा है। दस-बारह साल से हिलोरे ले रही हिन्दू भावनायें स्वयं को सैक्युलर कह रही राजनीतिक धाराओं ने खूब इस्तेमाल की हैं पर अब हिन्दू राष्ट्रवाद की शक्ल में वे उनके हाथों से निकल गई लगती हैं। ऐसे में वे भगवा ध्वजधारियों के प्रतिरोध में विभिन्न प्रकार के आंशिक हितों को उभारने की कोशिशें करते लग रहे हैं। मिश्र में और अलजीरिया में ऐसी ही हालात ने इस्लामिक जुनूनी राष्ट्रवाद और विरोधी राष्ट्रवाद की टक्कर में लाखों का जीवन दांव पर लगा रखा है।

मजदूर पक्ष का इन हालात में अभाव तेजी से बदलते सामाजिक-राजनीतिक घटनाक्रम में मजदूरों के हस्तक्षेप को असम्भव बना रहा है। मजदूरों के बीच उनकी अपनी धुरी का नहीं होना आज प्रत्येक मजदूर को हिन्दू राष्ट्रवाद अथवा उसके विरोधी राष्ट्रवाद के अखाड़े में धकेल रहा है। मजदूर का मजदूर होना और मजदूर पक्ष का अभाव आज हर मजदूर में दिन-भर में ही उसके आक्रोश को पन्द्रह किस्म के परस्पर-विरोधी टारगेट देता है और आशा के बीस तरह के परस्पर-विरोधी वाहक भी। मिनटों में एक-दूसरे की काट करने वाले विचारों को अपनाने की यह मन: स्थिति जहां अत्यन्त असुरक्षा और निराशा की अभिव्यक्ति है वहीं यह झुन्ड में जुड़ कर घातक बनने की क्षमता लिये है।

मजदूरों को इन परिस्थितियों के दृष्टिगत इन कुछ प्रश्नों पर अपने बीच तो विचार करना ही चाहिये—

१) तालाबन्दी, छंटनी, पुलिस दमन, असुरक्षा, बेरोजगारी और बदहाल जीवन जैसी समस्याओं का किसी भी राष्ट्रवादी धारा के पास क्या समाधान है?

२) जिन धाराओं के पास मजदूरों की समस्याओं का हल नहीं है उनसे मजदूर क्यों आस लगाते हैं? क्यों उनका समर्थन करते हैं?

३) मजदूर पक्ष के निर्माण में क्या बाधायें हैं?

वर्तमान के घटनाक्रम को देखने के दौरान हमें पिछली पीढियां झाँकती नजर आती हैं। वर्तमान पर इतिहास की गहरी छाप रहती है। इसलिये इतिहास की समझ वर्तमान की बेहतर समझ के लिये जरूरी होती है।

पचास साल पहले दुनिया-भर में भयंकर लड़ाई चल रही थी। हर देश में आन्तरिक दुश्मनों और बाहरी दुश्मनों के सफाये के नाम पर विशाल आबादियां युद्ध में कूदी थी। राष्ट्रवाद का जुनून चारों ओर छाया हुआ था। पांच करोड़ लोग राष्ट्रवाद की बलि चढे व चढाये गये थे। दरअसल, सामाजिक असन्तोष ने तब युद्ध के खून-खराबे में डुबकी लगाई थी।

पांच सौ साल पहले के आस-पास जिहाद-धर्मयुद्ध विशाल क्षेत्रों में फैले थे। अपनी-अपनी श्रेष्ठता स्थापित करने और स्वर्ग में प्रवेश के लिये नरसंहार में लाखों लोग उतारे व उतारे गये थे। विरोधियों के पूजागृहों को नष्ट-भ्रष्ट करना तथा अपनी सर्वोच्चता स्वीकार करवाना प्रतिष्ठा स्थापित करने के प्रमुख तरीके थे। वास्तव में, बेगार के खिलाफ आक्रोश के लूटपाट में शामिल होने और शामिल करने की अभिव्यक्ति थे वे धर्मयुद्ध।

पांच हजार साल पहले स्वामियों और दासों वाली समाज व्यवस्था जगह-जगह स्थापित हो रही थी। स्वामी रावण जैसे प्रकाण्ड विद्वान और महाबलि योद्धा को स्वामी राम ने वीभत्स युद्ध में पराजित किया था। दहेज में दास-दासियों की भेंट लिये स्वामी राम को वरने वाली स्वामी जनक पुत्री सीता को स्वामी रावण से मुक्त करने के लिये हुये युद्ध में लंका अग्नि की भेंट चढी, बहुत से दास-दासी मारे गये, स्वामी विभिषण नया लंकाधिपति बना।

पिछली पीढियों के साथ घटी इन घटनाओं के हमारे लिये कुछ सबक हैं कि नहीं?

हम और हमारे पुरखों का शोर इस समय यहाँ हवा में है। पांच-छह हजार साल के दौर पर निगाह दौड़ाने पर तो बँटा हुआ समाज ही नजर आता है—स्वामी और दास, सामन्त और भूदास, सौदागर और नौकर, पूंजीपति और मजदूर, मैनेजमेंट और मजदूर। वर्ण और जाति की चाश्नी ऊपर से है। ऐसे में यह "हम" कौन हैं? स्वामी-सामन्त-सौदागर-पूंजीपति-मैनेजमेन्ट के वैभव आधारित संस्कृति ने तो कहीं इस "हम" को जन्म नहीं दिया है? विगत की तरह वर्तमान में भी "हम", "हमारी पहचान" कहीं शोषण व शासन को बनाये रखने के प्रयास तो नहीं हैं?

व्यक्ति का मशीन का पुर्जा बन जाना, असुरक्षित जीवन, महत्वहीन जीवन, रोज-रोज का तनाव, सामाजिक रिश्तों को लपेटे अविश्वास की चादर, डर आदि लोगों को एक विशेष सोच की तरफ धकेलते हैं। स्वयं के तुच्छ होने का गहराता अहसास जहां व्यक्ति में अलौकिक के लिये आकर्षण पैदा करता है वहीं यह हमसफर-सहकर्मी को हेय दृष्टि से देखने की ओर भी ले जाता है। अकेलापन बेबसी और धकेले जाने को असहय बना देता है। प्रत्येक मजदूर के जीवन की यह एक हकीकत है। छिपाने अथवा अकेले में निपटने के प्रयास कारगर साबित नहीं हो रहे। बेबाक विचार-विमर्श और एकजुट प्रयासों में इन हालात को बदलने की क्षमता नजर आती है।

स्वयं को तुच्छ, शक्तिहीन मानने का एक नतीजा मसीहाओं-बिचौलियों की तलाश में निकलता है। "मेरे लिये कोई काम करदे" वाली सोच की जड़ यहीं है।

पुरातनपंथी कट्टरवादियों के बढते दबदबे के साथ जुड़ी प्राचीन संस्कृति और पहचान का बढता वजन महिलाओं पर विशेष हमलों में अभिव्यक्त हो रहा है और बढेगा। महिला मजदूरों की आज एक बड़ी संख्या है। छंटनी आदि पर परदे डालने के लिये महिला मजदूरों को घरों की चारदिवारी में पुनः धकेलने के लिये प्राचीन संस्कार अत्यन्त उपयोगी साबित हो रहे हैं। ईरान और रूस की हाल की घटनायें इसे समझने के अच्छे उदाहरण हैं।

दिसम्बर ९२ की गम्भीर घटनाओं के बीच मजदूर आन्दोलन में पायलटों की हड़ताल एक आशा की किरण है। "देश संकट में है" के चौतरफा शोर के बीच गम्भीर और सौम्य बने रह कर वेतन वृद्धि व वर्किंग कन्डीशनों में सुधार के लिए पायलटों द्वारा हड़ताल उन्हें शाबासी का हकदार बनाती है।

पायलटों की हड़ताल कुचलने के लिए रूस और उजबेकिस्तान से जहाज व पायलट मंगा लिये गये हैं। मिश्र व इंग्लैण्ड से विमान व पायलटों को लाने के लिए इंडियन एयरलाइन्स मैनेजमेंट नेगोसियेशन कर रही है। यह घटनायें मैनेजमेंटों के अन्तर्राष्ट्रीय तालमेल को साफ-साफ दिखाती हैं।

हड़ताल तोड़ने के लिये एयर फोर्स के पायलटों का उपयोग करने की मैनेजमेन्ट धमकी दे रही है। इंडियन एयरलाइन्स मैनेजमेंट का यह कदम १९८० में अमरीका के राष्ट्रपति द्वारा एयर फोर्स कन्ट्रोलरों की हड़ताल को कुचलने के लिए एयर फोर्स के इस्तेमाल की याद दिलाता है। साथ ही, यह दिखाता है कि मैनेजमेंटें एक दूसरे के अनुभवों से सीखती हैं।

इंडियन एयरलाइन्स पायलटों की एकजुटता और डटे रहना सराहनीय है पर इन हालात में मात्र यह कदम उनके संघर्ष को आगे नहीं बढ़ा सकते। अन्य देशों के पायलटों से एकता के प्रयास करने के साथ-साथ भारत में अन्य क्षेत्रों के मजदूरों से तालमेल भी इस मजदूर संघर्ष को आगे बढ़ाने के लिए स्पष्टत: जरूरी हैं। हड़ताली पायलटों के लिये "दुनियां के मजदूरो, एक हो!" महज एक नारा नहीं बल्कि उनके लिये ऐसे प्रयास एक अरजेन्ट आवश्यकता बन गए हैं।

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक एवं सम्पादक शेरसिंह के लिए उत्तरांचल प्रिन्टर्स, फरीदाबाद से मुद्रित: